Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 SHISRRJ | Volume 4 | Issue 2 | ISSN : 2581- 6306

काशीनाथ सिंह का कथासाहित्य : आलोचनात्मक मूल्यांकन

स्वाति सिंह
शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश।

Article Info
Volume 4, Issue 2
Page Number : 236-243

Publication Issue :
March-April-2021

Article History
Accepted : 01 April 2021
Published : 30 April 2021

शोधसारांश- काशीनाथ सिंह का कथासाहित्य आजादी के बाद साठोत्तरी हिंदी कहानी से शुरू होकर 21वीं सदी के दो दशक तक फैला है। वे अपने कथासाहित्य में ऐतिहासिक विकासक्रम में स्वयं को जाँचते-बदलते एक सहज-सजग लेखक के रूप में हिंदी साहित्य में अपनी जगह सुनिश्चित की है। काशीनाथ जीवंत कथा भाषा में सामान्यजन के हिमायती बन कर प्रस्तुत हुए। उनका संपूर्ण कथासाहित्य उपेक्षित-शोषित और परिस्थितजन्य हताशा से जनित लोगों का आख्यान है जिसमें स्थानीयता और वैश्विक मंतव्य एक साथ प्रस्तुत हुआ है।

मुख्यशब्द- काशीनाथ सिंह, कथासाहित्य, आजादी, ऐतिहासिक, उपेक्षित-शोषित, परिस्थितजन्य, स्थानीयता, वैश्विक।

साहित्य युग सापेक्ष होता है इसलिए साहित्य समसामयिक स्थितियों को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखने के लिए प्रतिबद्ध होता है। बीसवीं सदी के साठ और सत्तर के दशक का हिंदी कथासाहित्य अपनी समकालीन स्थितियों को ठीक ढंग से निरूपित करने में असफल था। इस असफलता के कारणों को काशीनाथ सिंह अपने इस वक्तव्य में जाहिर करते हैं-'स्वाधीनता को 'नई कहानी' में जो आशाएँ, आकांक्षाएँ और सपने जगाए थे, उन्हें भारत-चीन युद्ध ने ध्वस्त कर दिया। विकास की सारी योजनाएँ भ्रष्टाचार की शिकार साबित हो गई थीं। देश असहाय हो गया था और हमारा राष्ट्रनायक खुद को अकेला और निरीह महसूस करने लगा था। हमारी कहानियाँ इसी अकेलेपन और ध्वस्त होते जा रहे पुराने मूल्यों की प्रतिच्छवियाँ थीं।'

काशीनाथ सिंह का कथासाहित्य अपने पूर्व और समकालीन कथाकारों की पारंपरिक समरसता से हटकर अधिक संप्रेषणजन्य है। कथा-भाषा का नवीनीकरण, नए शब्द-संयोजन, अर्थ-व्याप्ति, नया शिल्प पक्ष आदि ने उनकी कहानी को एक नूतन सौष्ठव देता है। साथ ही, काशीनाथ सिंह की अनुभवजन्य यथार्थोन्मुख कथन शैली ने उनकी कहानियों को जीवंत और सक्रिय बना देती है। अपने अनुभवजन्य यथार्थ को काशीनाथ सिंह यूँ परिभाषित करते हैं- "मैं वही लिखता हूँ जो बखूबी जानता हूँ। जिसे नहीं जानता हूँ या कम जानता हूँ, उसमें हाथ नहीं डालता कोशिश तो यहाँ तक रहती है कि लिखी जा रही चीज को जितना मैं जानूँ उतना और कोई न जानता हो, और अगर जानता भी हो तो कम से कम पढ़ते समय उसे लगे कि हाँ, यह रही वह चीज जिसे वह जानता तो था लेकिन कह नहीं पाता था या इस सफाई से नहीं कह पाता था।"[1]

स्वतंत्रता के बाद भारत में हुए मोहभंग की स्थिति को नई कहानी ने गहराई से प्रस्तुत किया। आगे चलकर समकालीन कथाकारों ने इस मोहभंग की स्थिति को कहानी से निकालकर जीवन के यथार्थ से जोड़ा। इस यथार्थ को प्रस्तुत करने के लिए तद्युगीन विभिन्न सामाजिक, आर्थिक-सांस्कृतिक परिवर्तनों को भी रेखांकित किया गया। "इस दौर के कहानीकारों ने इस तरह के सांचों में बंद मूल्यों को एकवासी तिलांजलि दे दी और वह जीवन स्थितियों के यथार्थ को समझने में प्रवृत्त हुआ।" [2]

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

काशीनाथ सिंह ने अपने युगीन छद्म मूल्यों को अपने कथासाहित्य में अभिव्यक्त किया। उन्होंनें यथार्थवादी स्थितियों और युगीन जीवन की वास्तविकता को जोड़कर कथासाहित्य को समृद्ध बनाया।

काशीनाथ सिंह का संपूर्ण कथासाहित्य आजादी के बाद के 70 सालों की यात्रा है जो सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक विकासक्रम है। "काशीनाथ सिंह की कहानियाँ ऐतिहासिक जरूरत से उत्पन्न एक सजग रचनाकार की सृष्टि है, जो साठोत्तरी अर्थहीनता की अनेक अंधेरी गुफाओं से निकालकर कहानी को सामाजिक अर्थवत्ता देती हैं।"[3]

समकालीन हिंदी कथाकारों में काशीनाथ सिंह का रचनात्मक अवदान महत्त्वपूर्ण है। नवऔपनिवेशिक प्रतिरोध, सांप्रदायिकता के विविध संदर्भों के प्रति सजगता, अस्मिता परक विमर्शों का तटस्थतापूर्ण विश्लेषण, लोकचेतना से युक्त लेखन कर्म आदि विशेषताएँ काशीनाथ सिंह और उनके साहित्य को महत्त्वपूर्ण बनाती है। समकालीन कहानी में काशीनाथ सिंह के साथ प्रतिनिधि कथाकारों में ज्ञानरंजन, बदिउज्जमा, दूधनाथ सिंह, कृष्णा सोबती, ममता कालिया, मैत्रेयी पुष्पा, शिवमूर्ति, स्वयं प्रकाश, असगर वजाहत आदि भी महत्त्वपूर्ण नाम हैं। काशीनाथ सिंह ने समकालीन समस्याओं को चुटिले अंदाज में प्रस्तुत किया। उनकी 'कहन' शैली ने तत्काल सामाजिक और अवांछित परिस्थितियों की ओर इशारा करती है। काशीनाथ सिंह की लेखनी की विशेषता बताते हुए प्रहलाद अग्रवाल लिखते हैं- "काशीनाथ जी बहुत बड़ी विशेषता है- भ्रष्ट परिवेश के साथ समझौता न कर पाना। वे बड़ी सहजता से बहुत गहरी बात कर जाते हैं। यही सहजता उनकी भाषा में भी है जो अपने आस-पास के जीवन से भी बेहिचक ले ली गई है।"[4]

काशीनाथ सिंह की कथा यात्रा अनवरत है। नक्सलवादी आंदोलन से लेकर नवउदारवादी स्थितियों, बावरी विध्वंस से मिलेनियम वर्ष के बाजारवादी उत्सव, छोटे कस्बों और बस्तियों के तथाकथित कॉस्मोपैलिटन बनने की संभावना से सांप्रदायिक उन्माद का राजनैतिक और सांस्कृतिक कवायद का रूप लेना! उपर्युक्त सभी स्थितियाँ काशीनाथ सिंह की कहानियों और उपन्यासों की विषयवस्तु है।

काशीनाथ सिंह की लोकप्रियता उनकी रचना 'काशी का अस्सी' से सर्वग्राम्य हुई। 'हंस' में छपे उन संस्मरणों ने जो बाद में 'काशी का अस्सी' का हिस्सा बने, उनको इस सीमित परिधि से बाहर निकाला और ऐसे लोगों ने भी काशीनाथ सिंह को पढ़ा, जो हिंदी के साहित्यिक समाज का हिस्सा न थे। रंगकर्मियों का ध्यान उनकी तरफ गया (बाद में सिनेमा के लोगों ने 'काशी का अस्सी' पर फिल्म बनाई)। युवा कथा आलोचक आशीष त्रिपाठी के अनुसार- 'यह तथ्य है कि ज्यादा लोकप्रियता उन्हें एक संस्मरण लेखक और खास तौर पर 'काशी का अस्सी' के उपन्यासकार के रूप में मिली। कहानीकार के रूप में उनकी लोकप्रियता आज शायद दूसरे स्थान पर है।'

काशीनाथ सिंह का कथासाहित्य समयानुकूल रहा। काशीनाथ सिंह ने बदलते समय को अपनी कहानियों में चित्रित किया। उनकी कहानियाँ युगीन बोध के साथ जीवन की विद्रूपताओं को उजागर करती हैं। इसी संदर्भ में खगेन्द्र ठाकुर का मानना है- "काशीनाथ की कहानियाँ समकालीन जीवन का भेद खोलने, आधुनिक संरचना के उदाहरण पेश करने और समकालीन द्वन्द्व को मूर्त करने के प्रयत्नों के बावजूद पठनीयता का निर्वाह करने में समर्थ है।"[5]

काशीनाथ सिंह की महत्ता को विभिन्न कथा-आलोचकों ने समय-समय पर चिन्हित किया है। इस संदर्भ में ममता कालिया का कथन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है- "सन साठ की पीढ़ी कहते ही हिन्दी कहानी के इतिहास का एक पड़ाव यादों में आता है, जिसमें चार चिराग रौशन हैं। दूधनाथ सिंह, ज्ञान रंजन, काशीनाथ सिंह और रवीन्द्र कालिया, यह ऐसे नाम हैं, जिन्होंने अपने समय के कहानी की फॉर्मूला की बद्धता के खिलाफ अपनी ताजा रचनाओं से जेहाद छेड़ा।"[6]

'काशी का अस्सी' बनारस का शोकगीत है। भूमंडलीकरण ने शहरों, कस्बों और गाँवों को अपने गिरफ्त में ले लिया। 'काशी का अस्सी' पाँच अलग-अलग कहानियों, क्रमशः 'देख तमाशा लकड़ी का', 'संतों घर में झगरा भारी', 'असंतों और

घोंघाबसंतों का अस्सी', 'पांड़े कौन कुमति तोहें लागी', और 'कौन ठगवा नगरिया लूटल हो' का वृत्तांत है। दरअसल 'काशी का अस्सी' तो अस्सी मोहल्ले के माध्यम से संपूर्ण भारतवर्ष के बाजारीकरण और भूमंडलीकरण को दिखाया गया है।

काशीनाथ सिंह ने कहानियाँ काल्पनिक रूप से गढ़ी नहीं बल्कि अपने परिवेश से उन्हें कथा सूत्र मिला। उनकी कहानियों में जीवन के बहुआयामी स्थितियों को प्रमाणिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है- "काशीनाथ सिंह की कहानियाँ ऐतिहासिक जरूरत से उत्पन्न एक सजग रचनाकार की सृष्टि है, जो साठोत्तरी अर्थहीनता की अनेक गहरी अंधेरी गुफाओं से निकालकर कहानी को सामाजिक अर्थवत्ता देती है।"[7]

काशीनाथ सिंह की कहानियों में राजनैतिक चेतना हमेशा से 'अंडरटोन' रही है। 'सदी का सबसे बड़ा आदमी' कहानी संग्रह की भूमिका में स्वयं उन्हीं के द्वारा इसकी बानगी प्रस्तुत की गई है-"अगर आप गौर से देखें तो उन और इन कहानियों की उमर में दस सालों का फर्क है। वे 74-75 में लिखी गयी थीं और ये 84-45 में और यह फर्क मामूली फर्क नहीं है। इन दस सालों की शुरुआत हुई थी 'आपातकाल' से और अन्त हुआ प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी की हत्या से। इन वर्षों के दरम्यान आजाद भारत ने जितनी दिलचस्प, उत्तेजक, उलम्मनपूर्ण और भयानक कहानियाँ इतिहास के पन्नों पर लिखी, उतनी पहले नजर न आयी थी। क्या कुछ नहीं हुआ था इस बीच?"[8]

ऐसे में काशीनाथ सिंह अपने कथ्य और पात्रों के साथ आते हैं, जो हमारे ही आस-पड़ोस के हैं। इनके कथासाहित्य में हमारे समय के सच को बयान करने और उसके कार्य-कारण श्रृंखला को प्रस्तुत करने का विशिष्ट गुण है। काशीनाथ सिंह वर्गीय दृष्टि और समकालीन समस्याओं दोनों को साथ लेकर एक जन-सरोकार युक्त दृष्टि अपने कथासाहित्य में रखते हैं। वे हिंदी कथा आलोचना के नए-पुराने विज्ञान को अपने कथ्य, शिल्प और भाषा से एक झटके में तोड़ देते हैं। इसलिए काशीनाथ सिंह के कथासाहित्य की सटीक आलोचना सिर्फ उनका पाठक कर सकता है। काशीनाथ सिंह का पाठक-वर्ग विशुद्ध हिंदी साहित्य से भी इतर विपुल संख्या में है।

काशीनाथ सिंह के कथासाहित्य में आमजन कथ्य के रूप में हर जगह विद्यमान हैं। आमजन के कटु यथार्थ को उन्होंने छात्र, अध्यापक, पिता, पुत्र, पुत्री, बहु, पड़ोसी आदि के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। सामान्य जन का यथार्थ रोटी, कपड़ा और मकान से हमेशा जुड़ा रहा है। 'अपना मोर्चा' उपन्यास में छात्र अपने अध्यापक से पूछते हैं- "हम कुछ छोटी-मोटी बातें जानना चाहते हैं, समझना चाहते हैं, मसलन एक आदमी सारी जिन्दगी जी-तोड़ मेहनत करता है फिर भी गरीब ही क्यों रहता है, जब खाने को इतना मौजूद है तो लोग भूखों क्यों मरते हैं? जब सारा शहर रंग-बिरंगे कपड़ों से भरा पड़ा है तो लोग नंगे क्यों हैं?"[9]

काशीनाथ सिंह ने मध्य वर्ग के चरित्र को सूक्ष्मता से अपने उपन्यास 'रेहन पर रग्घू' में प्रस्तुत किया है। उपन्यास का मुख्य पात्र रघुनाथ सारी प्रगतिशीलता घर के बाहर होते देख उसको समर्थन देकर बुद्धिजीवी बना रहना चाहता है। रघुनाथ अपने गाँव में चमरटोल के हलवाहों की हड़ताल को सही ठहराता है, वहीं दूसरी ओर, उसकी बेटी सरला को पिछड़ी जाति के युवक सुदेश भारती से शादी करने का विचार उसे गंवार नहीं है। वह मन ही मन सोचता है-"बच्चों को ऐसे संस्कार कहां से मिले- यह उनकी समझ से बाहर था। संजय को कोई नहीं मिली- न ठाकुर, न बामन, न भूमिहार, मिली तो लाला की लड़की। फिर भी वे इस लायक थे कि मुँह दिखा सकें। लेकिन यह सरला? वे किसे मुँह दिखाएंगे।"[10] बेटी को लेकर पिता एक रूढ़िवादी सोच का व्यक्ति है। यही भारतीय मध्य वर्ग की वास्तविक स्थिति है। रघुनाथ के चरित्र को लेकर अभिजीत सिंह ने अपनी किताब 'कासी बसै जुलाहा एक' में लिखते हैं- "रघुनाथ एक 'सिम्बालिक' चरित्र है नए भारतीय समाज का। ढेर सारे सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक परिवर्तनों के बीच सहमति और असहमति के बीच झूलता एक आदमी।"[11]

'रेहन पर रग्घू' उपन्यास में सरला के माध्यम से नयी और क्रांतिकारी स्त्री को प्रस्तुत किया है। सरला अपनी जाति से बाहर एक दलित युवक से प्रेम करती है, लेकिन इस प्रेम का चौतरफा विरोध झेलकर भी हार नहीं मानती। सुदेश भारती से विवाह न कर पाने की स्थिति में भी सरला सुदेश के साथ 'लिव इन रिलेशनशिप' में रहती है। सरला अपनी अस्मिता और स्वाधीनता को बचाए रखने के लिए अपने पिता रघुनाथ सिंह से कहती है- "आप दूसरों की शर्तों पर शादी कर रहे थे यहाँ मैं करूँगी अपनी शर्तों पर आप मेरी 'स्वाधीनता' दूसरे के हाथ बेच रहे थे यहाँ मेरी 'स्वाधीनता' सुरक्षित है।"[12]

दूसरी ओर, काशीनाथ सिंह ने 'महुआ चरित' उपन्यास के माध्यम से 21वीं सदी के भारत के पुरुषवादी समाज की वास्तविकता को भी प्रस्तुत किया है। स्त्री-विमर्श के हिमायती देह-मुक्ति और स्त्री के निर्णय लेने के अधिकार को लेकर विचार से साहित्य तक अपनी बात रख रहे हैं। लेकिन समाज का यथार्थ इससे भिन्न है। 'महुआ चरित' उपन्यास में लेखक स्त्री के देह और स्त्री मन के अन्तर्विरोधों को सूक्ष्मता से प्रस्तुत किया है। उपन्यास में शादी के बाद हर्षुल को जब महुआ और साजिद के संबंधों का पता चलता है तो वह उससे बात करना छोड़ देता है। महुआ सोचती है- "हम हर चीज के बँटवारे को सह लेते हैं लेकिन देह का बटवारा नहीं सहा जाता। ऐसा क्यों है? ऐसा क्या है देह में कि उसका तो कुछ नहीं बिगड़ता लेकिन मन का सारा रिश्ता-नाता तहस-नहस हो जाता है।"[13] महुआ 21वीं सदी की स्त्री है। पितृसत्तात्मक समाज में वह रूढ़ियाँ तोड़ने का प्रयास करती है लेकिन पूरी तरह सफल नहीं होती। वह साजिद के साथ हैदराबाद जाती है पर अपने माता-पिता को नहीं बता पाती। वह साजिद के कारण गर्भवती होती है, और साजिद के बच्चे को जन्म देना चाहती है। लेकिन साजिद की उपेक्षा तथा मां-बाप और समाज के डर से अंत में गर्भपात कराने को विवश हो जाती है- "दो शब्द हथौड़े की तरह दिमाग पर घातक चोट कर रहे थे लगातार 'कुंवारी माँ' और 'मुसलमान बाप'।"[14]

21वीं सदी में भी पुरुष की पारंपरिक सोच और व्यवहार स्त्रियों की स्थिति को और अधिक दयनीय बनाती है। हर्षुल, महुआ के साजिद से संबंध को स्वीकार नहीं कर पाता लेकिन वह स्वयं वर्तिका बनर्जी के साथ विवाह से पहले और बाद में भी संबंध रखता है। यह पुरुषवादी सोच का वह स्वरूप है जो मात्र देह तक सीमित है।

जातिय समीकरण ने भूमंडलीकृत नए समाज में भी अपना वर्चस्व कायम रखा है। उच्च जाति के लोग नौकरी के तलाश में बैरा, बावर्ची भी बन गए हैं लेकिन जातिय दर्प उनमें कूट-कूट कर भरा है। काशीनाथ सिंह ने अपनी कहानी 'चोट' में इस विषय को उठाया है। कहानी में गाँव से शहर आया संचा सिंह एक छोटे से रेस्टोरेन्ट में बैरा का काम करता है। एक दोपहर संचा सिंह के गाँव का निकाम नामक उसके रेस्टोरेंट में आता है। निकाम जाति से गड़ेरिया है और शहर के ही किसी दफ्तर में चपरासी हैं। संचा सिंह को अपने काम के अनुरुप निकाम के लिए चाय-पानी परोसना था। एक ही गाँव के दो व्यक्तियों में परोसने वाला उच्च जाति का है और जिसको परोसा जा रहा वह निम्न जाति का! उच्च जाति के मूल्यों पर यह क्रिया गहरी चोट थी। धीरे-धीरे संचा सिंह क्रोधित हो जाता है और निकाम के 'टिप' देने की बात पर उसको पीटने लगता है। निकाम को मारते हुए संचा सिंह चिल्लाता है "तुम्हारी टिप तुम्हारी गांड में डाल देंगे। साले गड़ेरिया कहीं का, तू अपने को समझता क्या है।"[15] नई पूँजीवादी व्यवस्था व्यक्ति को परंपरागत पेशे के तयशुदा ढाँचे से मुक्त किया है लेकिन यह व्यवस्था जाति से व्यक्ति को अलग नहीं कर पायी। यह कड़वा सामाजिक यथार्थ है।

इस क्रम में काशीनाथ सिंह की 'संतरा' कहानी भी उल्लेखनीय है। पहली नज़र में यह कहानी गरीबी की विद्रूप स्थितियों पर मारक व्यंग्य सरीखा लगती है। परंतु कहानी एक साथ निम्न मध्य वर्ग की हताशा, कुंठा और विडम्बना का भी चित्रण है। यह घटना इस बाज़ारवादी समय में रोज घटती है लेकिन हम उसे अनदेखा करते हैं। कहानी में सीताराम निम्न मध्यवर्गीय कर्मचारी है। एक शाम जब वह दफ्तर से घर लौट रहा होता है, तब रास्ते में उसका एक मित्र उसे संतरे का रस पिला देता है और घर लौटने पर संतरे की महक उसकी बच्चियों को लग जाती है। वे आपस में बात करती हैं और बाद में अपनी माँ से

भी इस बात का जिक्र करती हैं कि पापा ने संतरा खाया है। उक्त कहानी में संतरे की खूशबू के कारण बवाल मच जाता है। सीताराम की पत्नी अपने पति को उलाहना देते और धिक्कारते हुए कहती है– "छी: छी: शांता ने वहीं 'फर्श पर थूका' "कैसे घर चलाती हूँ, यह मैं ही जानती हूँ और तुम हो कि चोरी–चोरी संतरा खाओगे, लीची खाओगे, आम खाओगे। अरे, तुम सारी शर्म–हया घोलकर पी गए हो क्या? ऐसा कहीं आदमी होता है?"[16] यह प्रसंग झकझोरने वाला है, जहाँ एक ओर बाजार ने मनुष्य को उपभोक्ता बना दिया है वहीं अधिकांश परिवार के लिए फल खाना अय्याशी का पयार्य है, क्योंकि उनकी आर्थिक स्थिति इसकी गवाही नहीं देती।

काशीनाथ सिंह ने वृद्धों की उपेक्षा के विभिन्न आयामों पर काई कहानियाँ लिखीं। 'अपना रास्ता लो बाबा' कहानी है शहर में कमाने आए पोते और उसके बाबा की जो शहर में उसके पास अपना इलाज करवाने आते हैं। लेकिन पोते का अपने बाबा के साथ कोई आत्मीय रिश्ता नहीं है–"बाबा न पलकें गिराईं और सिसकने लगे। अगहन–कार्तिक से कहता आ रहा था सुदामा से कि चलो, अस्पताल दिखा दो। कोई एक दिन बस चले चलो। किसी के लिए उसे मौका नहीं। उसकी मेहर ऐसे–ऐसे बिंग बोलती है कि चौके से बगैर खाए उठ जाना पड़ता है।"[17] बाबा अपने दु:ख को दूसरे के सामने व्यक्त भी नहीं कर सकते क्योंकि यह उनके पारिवारिक मूल्य के विरुद्ध है।

रोजगार का संकट युवाओं के लिए ज्वलंत मुद्दा रहा है। विभिन्न सरकारों द्वारा इस संकट को दूर करने का आश्वासन मात्र दिया गया। काशीनाथ सिंह ने 'मुसइ चा' कहानी में पढ़े लिखे नौजवान का बेरोजगारी में अपराध करने की घटना का प्रसंग है, साथ ही कानून को धता बताने का विवरण दिया है। "विश्वविद्यालय से निकलने के बाद हार की परिस्थितियों ने उसे नौकरी करने के लिए मजबूर किया, आज के बहुत से नौजवानों की तरह। वह दो साल तक यहाँ–वहाँ भटकता रहा और जब वापस आया तो सीधे पड़ोस के 'उच्चतर माध्यमिक महाविद्यालय' (जिसमें वह पढ़ चुका था) के प्राचार्य के पास पहुंचा– साहब! हमें काम चाहिए। प्राचार्य ने उसे प्रबंधक के पास भेजा। प्रबंधक ने मंत्री के पास भेजा। मंत्री ने उसे विद्यालय के अध्यक्ष और उस क्षेत्र के विधायक के पास भेजा। वह विधायक के पास गया। विधायक ने लखनऊ के सेशन से लौट आने के बाद ध्यान से उसकी बात सुनने का आश्वासन दिया।"[18] कहानी आगे बेरोजगारी को सार्वभौमिक समस्या की तरह प्रस्तुत होता है– "मैंने उचककर देखने की कोशिश की और सिर्फ इतना समझ में आया कि दोनों तरफ रूकी बसों की सवारियों के सिवा बाकी सब नौजवान लड़के हैं और कुछ चिल्ला रहे हैं बेरोजगार।"[19] ये नौजवान मंत्री की कार रोककर अपनी माँग उनके समक्ष रख रहे हैं और उसके एवज़ में 'कुछ' देने का भी प्रस्ताव रखते हैं। एक अधेड़ व्यक्ति युवकों का प्रस्ताव मंत्री के सामने रखते हुए कहता है– "जनाब! ये जो लड़के हैं, पढ़ाई–लिखाई करके घर बैठे हैं। कोई काम नहीं मिल रहा है। सो, इन्होंने मंत्री के सामने तीन प्रस्ताव रखे हैं– हर एक से पाँचसौ रुपए, एक बोतल शराब और एक नफीस रंडी। उनका कहना है कि इनमें से चाहे जो ले लो बल्कि तीनों ही ले जाओ मगर रोजगार दो।"[20]

काशीनाथ सिंह के कथासाहित्य में युगीन यथार्थ की अभिव्यक्ति है तथा स्थितियाँ न सुधरने पर आक्रोश भी व्यक्त करते हैं। काशीनाथ सिंह पिछले 50 वर्षों में बदलते भारत की स्थितियों पर पैनी रखे हुए हैं। उनका कथासाहित्य अपने समय के साथ निरंतर मुठभेड़ और संघर्ष करता रहता है। उन्होंने अपने कथासाहित्य में देशकाल वातावरण को प्रस्तुत किया और उसमें सामान्य जन के हितों और उनकी समस्याओं की पहचान कर उसको संवेदनापूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया। उन्होंने राजनैतिक कदाचार, अफसरशाही, जातियता, स्त्रियों की स्थिति, युवाओं और वृद्धों की समस्याओं, वैश्विकरण और बाजारीकरण के दुष्प्रभावों, ग्रामीण मूल्य और शहरी वातावरण में बदलते मूल्यों का यथार्थ चित्रण किया है।

काशीनाथ सिंह मूलत: कथाकार हैं। उपन्यास लेखन उन्होंने अपने लेखन के उत्तरार्द्ध में किया। उनका उपन्यास लेखन भी एक संस्मरण का ही कथा–शिल्प है। काशीनाथ सिंह एक ऐसे कथाकार हैं जिन्होंने साठोत्तरी युग से समकालीन युग तक बिखरे,

जन–सामान्य के जीवन से जुड़ी सामाजिक समस्याओं को पाठकों तक पहुँचाया। उनके लेखन में सरलता और सहजता देखी जा सकती है। अपनी इसी सरल और सहज अभिव्यक्ति द्वारा वह सामान्य लोगों में सकारात्मकता और संभावना का संचार करते हैं। काशीनाथ सिंह की विशेषता रही है कि वे अपने कथा–पात्रों का मनोविश्लेषण बहुत सूक्ष्मता से करते हैं। इस मनोविश्लेषण के कारण ही युगीन समस्याओं के मूल स्वरूप पकड़ को वे पकड़ पाते हैं। 'रेहन पर रग्घू' में रघुनाथ सिंह का अपनी पत्नी के सामने विवशता उसके विद्रूप चरित्र को भी उभारता है कि समाज के सामने रघुनाथ प्रगतिशील है और घर में पारंपरिक होने की चाहत लिए द्वन्द्वात्मक स्थितियों में दु:ख भोग रहे हैं– "शीला, हमारे तीन बच्चे है लेकिन पता नहीं क्यों, कभी–कभी मेरे भीतर ऐसी हूक उठती है जैसे लगता है– मेरी औरत बांझ है, और मैं निसंतान पिता हूँ माँ और पिता होने का सुख: जाना हमने? हमने न बेटे की शादी देखी, न बेटी की। न बहु देखी न होने वाला दामाद देखा। हम ऐसे अभागे माँ–बाप है जिसे उनका बेटा अपने विवाह की सूचना देता है और बेटी धांस देती है कि इजाजत नहीं देंगे तो न्योता नहीं दूंगी। और अब तुम्हारी नज़र है राजू पर कि सारी साह वह पूरी करेगा। निहाल कर देगा तुम्हें। ऐसा कोई भ्रम हो तो निकाल दो दिमाग से। मुझे पता है कि वह इनसे भी आगे जा रहा है। उसने एक ऐसी विधवा लड़की ढूंढ निकाली है जिसके दो साल का बच्चा भी है। यही नहीं, वह कोई अच्छी खासी नौकरी भी करती है। उसी के पैसों से दिल्ली में ऐश कर रहा है। मोटर साईकिल ले ही गया है मस्ती के लिए। बच्चा पालना और ऐश करना– दो ही काम हैं उसके। गये थे डोनेशन की रकम लेकर आज तक पता नहीं चल सका कि एडमिशन लिया भी या नहीं।"[21]

काशीनाथ सिंह का वैशिष्ट्य है कि वे अपने उपन्यासों में मूल समस्या के साथ कई तरह की गौण समस्याओं को भी रखते हैं। मसलन, 'रेहन पर रग्घू' की मूल समस्या बदली वैश्विक नीतियों के कारण एकाकी वृद्ध की समस्या है। लेकिन, गौण रूप से जातिवाद, मध्य–वर्ग का वैचारिक खोखलापन, लिव–इन–रिलेशन, कृषि मजदूरों की गाँव में बदलती परिस्थिति भी उपस्थित हैं। 'काशी का अस्सी' में भूमंडलीकरण के कारण बनारस के पांडे के जीवन में आए बदलाव की व्यथा–कथा है। साथ ही राजनीति का विद्रूप होता चेहरा, जातिवाद, बाजारवाद, मोहल्ले के आस–पड़ोस का आपसी विभेद, नशे की बढ़ती समस्या आदि का भी चित्रण किया गया है।

काशीनाथ सिंह के लेखन में प्रगतिशीलता और जनवादी चेतना अपने लोक के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। वैचारिक रूप से अपने बड़े भाई वरिष्ठ आलोचक नामवर सिंह की तरह मार्क्सवाद की विधिवत पढ़ाई और प्रशिक्षण नहीं लिया। लेकिन मार्क्सवादी जनवादी हो सकता है, लेकिन जनवादी मार्क्सवादी हो यह आवश्यक नहीं है। इस पर नरेंद्र सिंह का उद्धरण महत्त्वपूर्ण है– "अनेक विद्वानों की तरह हम भी जनवाद को प्रगतिवाद का ही एक रूप नहीं मानते हैं क्योंकि यह तो निर्विवाद सत्य है कि हर जनवादी कवि के लिए यह आवश्यक नहीं है। वह मार्क्सवादी हो परंतु हर मार्क्सवादी कवि को जनवादी होना अनिवार्य है।"[22] इसी प्रकार बिना मार्क्सवादी ज्ञान–मीमांसा के भी जनवादी कथाकार हुआ जा सकता है। काशीनाथ सिंह के पात्र खांटी गांव के और शहर की संरचना से युक्त नागरिक समाज दोनों है। वह प्रेमचंद की परंपरा के कथाकार है जो बदलते भारत के आम आदमी के जन सरोकार को प्रस्तुत करते हैं। इस संदर्भ में कुंवरपाल सिंह लिखते हैं– "काशीनाथ सिंह को लेखक बनाने में उनका आत्मसंघर्ष और सामाजिक प्रतिबद्धता अधिक उत्तरदाई है।"[23] काशीनाथ सिंह लेखकीय ध्येय, सामाजिक प्रतिबद्धता के प्रति काफी सजग रहे। उनका लिखना समाज के स्वास्थ्य तंतु के बिगाड़ने के खिलाफ है। जनता पर राजनीतिक, सांस्कृतिक और अधिक दुश्वारियों के विरुद्ध है। काशीनाथ सिंह 'लेखक की छेड़छाड' में लिखते हैं– "ये वर्ष भारतीय जनता और उसके सुख–दुख के साथी लेखकों के लिए बड़ी चुनौती भरे वर्ष रहे हैं और हम बड़े गर्व के साथ यह कह सकते हैं कि लेखक और संस्कृति कर्मियों ने बड़े शानदार ढंग से अपना दायित्व निभाया।"[24]

काशीनाथ सिंह ने समाज को बदलने और व्यवस्था सुधार की आकांक्षा लेकर लेखन आरंभ नहीं किया। बल्कि अपने आसपास के यथार्थ और गाँव शहर के लोगों में आ रहे बदलावों के कारणों को जानकर उसके तह में छिपी स्थितियों का यथार्थ चित्रण करने के लिए किया। इसीलिए उनके कथासाहित्य में वर्ण्य विषय की विविधता है। उन्होंने स्त्री पुरुष के परस्पर बदलते संदर्भ पर 'आखरी रात' और 'पायल पुरोहित' नामक कहानी लिखी। जिसमें क्रमश: यह बताया गया कि लेखक पति और पत्नी के बीच पैसों की तंगी उनके संबंधों में तनाव लाता है। 'पायल पुरोहित' में स्त्री स्वच्छंद रूप में रहना चाहती है। विवाह परिवार संस्था पर अविश्वास व्यक्त करते हुए अपनी देह-मुक्ति की घोषणा भी करती है।

प्रेम के बदलते स्वरूप पर उन्होंने 'पहला प्यार' और 'बैलून' कहानी लिखी। दोनों कहानियों में आकर्षण को प्रेम समझने की स्थितियों का चित्रण किया गया है। आगे चलकर उनके 'महुआ चरित' में निम्न मध्यवर्गीय महुआ के संघर्ष में स्त्रीत्व और स्वच्छंदता की चाव को भी दिखाया गया है। महुआ कहती है- "घर की माली हालत और 'कैरियर' की चिंता ने कभी एहसास ही नहीं होने दिया कि मैं औरत हूं, मेरी भी देह है, उस देह की अपनी जरूरतें हैं, माँग है, भूख है।"[25]

औद्योगिकीकरण और तथाकथित विकास की आँधी में गाँव, कस्बे और शहर के बदलते मानवीय संवेदना को भी काशीनाथ सिंह ने अपने कथासाहित्य में अभिव्यक्त किया है। 'एक लुप्त होती हुई नस्ल' कहानी में वृद्धों की पहले की स्थिति और बाद में वृद्धाश्रम में भेजे जाने की मार्मिक व्यथा कथा है।

भूमंडलीकरण के प्रभाव और भावी दुष्परिणामों को युगदद्रष्टा की भाँति अपने लेखन से काशीनाथ सिंह ने पहले ही सबको सचेत किया था। उनका उपन्यास 'काशी का अस्सी' राजनीति, पुलिस, नौकरशाही, लोकल और ग्लोबल के विभिन्न परतों की पोल खोलता है। उनके कथासाहित्य में उनके चरित्र संपूर्णता में उपस्थित होते हैं। उनकी कहानियों, उपन्यासों के पात्रों का चरित्र कहीं न कहीं हम और हमारे समाज से है, "काशीनाथ सिंह की शैली के वैशिष्ट्य पर ध्यान देने से सबसे पहले यह बात समझ में आती है कि काशीनाथ सिंह के पात्र अपने संपूर्ण अस्तित्व के साथ ही कथा पटल पर आमद होते हैं। यह पात्र कभी भी अपनी भूमिका के किसी एक पक्ष के एक ही रूप में सीमित नहीं रहते हैं। जब ये पात्र शिक्षक के रूप में होते हैं, तब वह पिता, भाई, मित्र, नागरिक आदि को स्थगित रखकर अनुपस्थित कर बना हुआ शिक्षक नहीं होता है जब वह वर्तमान में होता है, तो वह अतीत या भविष्य को स्थगित कर वहां नहीं होता है। सर्वकालिकता और सार्वदेशिकता की निजगत और समष्टिगत अवीकल उपस्थिति इन पात्रों की विशिष्टता है। वे कथा में वैसे ही होते हैं जैसे कि जीवन में हो सकते हैं।"[26] काशीनाथ सिंह ने ऐसे पात्रों को गढ़ा है, जो समाज की गहराई तक जाकर सच जानने के जिज्ञासु हैं।

काशीनाथ सिंह का कथासाहित्य आजादी के बाद साठोत्तरी हिंदी कहानी से शुरू होकर 21वीं सदी के दो दशक तक फैला है। वे अपने कथासाहित्य में ऐतिहासिक विकासक्रम में स्वयं को जाँचते-बदलते एक सहज-सजग लेखक के रूप में हिंदी साहित्य में अपनी जगह सुनिश्चित की है। काशीनाथ जीवंत कथा भाषा में सामान्यजन के हिमायती बन कर प्रस्तुत हुए। उनका संपूर्ण कथासाहित्य उपेक्षित-शोषित और परिस्थितजन्य हताशा से जनित लोगों का आख्यान है जिसमें स्थानीयता और वैश्विक मंतव्य एक साथ प्रस्तुत हुआ है।

सन्दर्भग्रन्थ

1. काशीनाथ सिंह, घर का जोगी जोगड़ा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2006,पृ. 82
2. नरेंद्र मोहन, (सं.) समकालीन कहानियां, भाग 2, भारतीय प्रकाशन संस्थान दिल्ली, 2000 पृ. 50
3. वागर्थ, अंक 2, सितंबर 1998, पृ. 28
4. प्रहलाद अग्रवाल, हिंदी कहानी:सातवां दशक,दि मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया लि.,1975, पृ. 43
5. मनीष दूबे, (सं.) काशी पर कहन, वर्षा प्रकाशन,इलाहाबाद, 2005, पृ. 312

6. वही, पृ.164
7. वागर्थ, अंक–2 सितम्बर 1998, पृ. 28
8. काशीनाथ सिंह, सदी का सबसे बड़ा आदमी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,1989, (भूमिका)
9. काशीनाथ सिंह, अपना मोर्चा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 24
10. काशीनाथ सिंह, रेहन पर रग्घू, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 54
11. अभिजीत सिंह, कासी बसै जुलाहा एक, आनंद प्रकाशन, दिल्ली,2017, पृ. 98
12. काशीनाथ सिंह, रेहन पर रग्घू, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृ. 54
13. काशीनाथ सिंह, महुआ चरित, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. 98
14. वही, पृ. 50
15. काशीनाथ सिंह, कहनी उपखान, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2019, पृ. 236
16. वही, पृ. 263
17. वही, पृ. 312
18. वही, पृ. 163
19. वही, पृ. 165
20. वही, पृ. 165
21. काशीनाथ सिंह, रेहन पर रग्घू, राजकमल प्रकाशन, 2008, नई दिल्ली, पृ. 89
22. नरेन्द्र सिंह, साठोत्तरी हिन्दी कविता में जनवादी चेतना, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली,1990, पृ. 41
23. मनीष दूबे, (सं.) काशी पर कहन, वर्षा प्रकाशन,इलाहाबाद, 2005, पृ. 120
24. काशीनाथ सिंह, लेखक से छेड़छाड़, किताबघर प्रकाशन,नई दिल्ली, 2013, पृ. 129
25. काशीनाथ सिंह, महुआ चरित, राजकमल प्रकाशन, 2019, नई दिल्ली, पृ. 89
26. प्रफुल्ल कोलख्यान, कथा–कथांतर और कथोपरांत काशी का अस्सी, पृ. 05
27. https://archive.org/details/PrafullaKolkhyanKATHKTHANTARKASHIKAASSI/page/n3/mode/1up